ध्रुपद गायिका असगरी बाई

फ़िल्म समीक्षा

फ़िल्म का नाम : असगरी बाई-सन्नाटे का सुर-पंचम
भाषा : हिन्दी
अवधि : 46 मिनट
निर्देशन : प्रीति चन्द्रियानी/ब्रह्मानन्द सिंह

असगरी बाई-सन्नाटे का सुर-पंचम

सीमा श्रीवास्तव

यह फ़िल्म 86 वर्षीय एक मात्र ध्रुपद गायिका असगरी बाई के जीवन पर केन्द्रित है। फ़िल्म का विवरण 2006 में असरगी बाई की मृत्यु के पहले उनसे की गई बातचीत पर आधारित है। उनका दबंग व्यक्तित्व और खुद पर ही हंसी ठिठोली करने की फितरत इस महान गायिका की गरिमा को और बढ़ा देती है। असगरी बाई को संगीत का गहरा इल्म था, वे कहती हैं, *'सुर में ईश्वर है। यदि सुर नहीं मिला तो ईश्वर क्या मिलेगा? आजकल के बेशर्म गवैये उन्हें सुर का ज्ञान नहीं, उनके गीतों में रूह नहीं सिर्फ़ बोल हैं, उनका संगीत अधूरा है।'* असगरी बाई बताती हैं कि उन्होंने अपने इल्म को देश दुनिया में पंहुचाया है। यूरोप, जापान तक उनके ध्रुपद की धूम रही है।

असगरी बाई की मां नज़ीर बेगम गायिका थीं और उस्ताद ज़हुर ख़ान की शार्गिद थीं। उस्ताद ने ही असगरी बाई को 15 साल संगीत का ज्ञान दिया और ध्रुपद गायन सिखाई। असगरी बाई उस्ताद से अपनी तालीम पाने की कहानी बड़ी मसख़री के साथ बताती हैं। कहती हैं कि उस्ताद इतने अनुशासनप्रिय थे कि ज़रा सी लापरवाही की गंभीर सज़ा देते थे। उनकी उस्तादी के ज़लज़ले ने एक बार तो सज़ा के रूप में 12 साल की उम्र में असगरी बाई के बाल ही मुंडवा दिए। वे कहती हैं कि आज जो भी नाम है वह उस्ताद की ही देन की वजह से है। उनके अनुसार 'गुरू का जो शासन नहीं होता तो संगीत में इतनी दक्षता भी नहीं आती। उस्ताद ज़हुर खान के लिए गायकी ईश्वर की साधना से कम नहीं थी।'

असगरी बाई टीकमगढ़, मध्यप्रदेश के राज बीर सिंह जुदेव के ओरछा दरबार में गाती थीं। वे कहती हैं कि टीकमगढ़ संगीतगढ़ था, वहां 450 गवैये थे। राजा वीर सिंह जुदेव अपने कलाकारों का बेहद ध्यान रखते थे। उनके यहां कला और कलाकार दोनों की परख थी, इज्ज़त थी। अब वो बात नहीं रही, ज़माना गुज़रा तो मंज़र भी बदल गए। वे चाहते थे कि उनके कलाकारों को अपने रोज़मर्रा के जीवन में कोई तकलीफ़ न हो वरना गाने में फ़र्क़ पड़ेगा। दरबार के पुराने दिनों-त्योहारों को याद करते हुए असगरी बाई कहती हैं, 'राजा के जमाने में बड़ी धूमधाम से बंसत और होली मनाई जाती थी। उनकी राजसी शान निराली थी, एक भगवान के घर होली होती थी एक राजा जुदेव के यहां। अब तो बस किले रह गये, दीवारें रह गईं और पुरानी यादें हैं।'

देश-ज़हान में अपनी कला का जादू चलाने वाली कलाकार की ज़िन्दगी में एक ऐसा भी दौर आया जब तंगी और गरीबी ने गुज़ारा भी दुश्वार कर दिया। तब एक ऐसा मोड़ आया जब असगरी बाई ने सरकार से फ़रियाद की कि उन्हें मिलने वाले देसी विदेशी सभी ईनामों को सरकार

वापस ले ले क्योंकि इससे उनकी बुनियादी ज़रूरतें पूरी नहीं होतीं। जब यह बात मीडिया के ज़रिए सरोद वादक उस्ताद अमज़द अली खान तक पंहुची तब उन्होंने उस्ताद हफ़ीज़ अली खान मेमोरियल ट्रस्ट कार्यक्रम में असगरी बाई को आमंत्रित कर एक लाख रुपये का पुरस्कार देने का निर्णय लिया। इस मसले पर जब उस्ताद अमज़द अली खान से बातचीत की गई तो उन्होंने कहा कि हर राज्य में कला संस्कृति विभाग है जिन्हें अपने क्षेत्र के कलाकारों के सम्मान की रक्षा करनी चाहिए।

जब प्रदेश के प्रशासन के बात की गई तो टीकमगढ़ के कलेक्टर डी एन रामोले ने बताया कि प्रदेश सरकार से असगरी बाई को 1500 रुपये और केन्द्र सरकार से 1500 रुपए दिए जाते हैं। उन्हें पद्मश्री की उपाधि मिली और शासकीय आवास और संगीत स्कूल चलाने की जगह भी प्रदान कराई गई है। मगर वास्तविकता में यह शासकीय आवास टीन की खोली जैसा है।

आज असगरी बाई हमारे बीच नहीं हैं। मगर यह फ़िल्म न केवल उनकी ज़िंदगी का खूबसूरत और अनमोल दस्तावेज़ है वरन् उनके प्रति श्रद्धाजंलि है। ज़िन्दादिल, हिम्मतवाली, किसी के आगे न दबने वाली असगरी बाई की ज़िन्दगी दो संस्कृतियों का भी बेजोड़ मेल प्रस्तुत करती है। मुस्लिम घराने की परवरिश के साथ साथ जब वे ईश्वर, पारम्परिक त्योहारों और साधना की बातें करती हैं तो पुराने समय में संस्कृतियों की साझी विरासत का सुन्दर दृश्य मन में कौंध जाता है।

सीमा श्रीवास्तव, *नारीवादी कार्यकर्ता हैं, जो महिला मुद्दों पर लिखती हैं। वे 'हम सबला' के सम्पादन समूह की सदस्य हैं।*

कविता

प्रेम के लिए फांसी

मीरारानी तुम तो फिर भी खुशकिस्मत थीं,
तुम्हें ज़हर का प्याला जिसने भी भेजा,
वह भाई तुम्हारा नहीं था,

कान्हा जी ज़हर से बचा भी लें,
कहर से बचायेंगे कैसे!

दिल टूटने की दवा
मियां लुकमान अली के पास भी तो नहीं होती!

भाई ने जो भेजा होता
प्याला ज़हर का,
तुम भी मीराबाई डंके की चोट पर
हंसकर कैसे ज़ाहिर करतीं कि
साथ तुम्हारे हुआ क्या!

"राणा जी ने भेजा विष का प्याला"
कह पाना फिर भी आसान था।

अनामिका